जेएसटी

माननीय जीएस सिंघवी से पहले एवं टी :एचबी । चलपति , जे.जे.

रजनी बाला, -*याचिकाकर्ता।*

बनाम

हरियाणा राज्य और अन्य,—-प्रतिवादी।

सीडब्ल्यूपी नं . 1995 का 10088

25 जुलाई, 1995

भारत का संविधान, 1950- *कला।* 14 एवं 16-तदर्थ *नियुक्ति* -- निश्चित, अवधि के लिए नियुक्त शिक्षकों की *सेवाओं की समाप्ति, भले ही पद समाप्त नहीं हुआ हो और न ही नियमित रूप से चयनित व्यक्ति उपलब्ध हो* -- सेवाओं की *ऐसी समाप्ति उल्लंघनात्मक है अनुच्छेद* 14 एवं 16 का .

माना गया कि सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित सिद्धांतों के मद्देनजर, हमारी राय है कि जहां एक *तदर्थ* या अस्थायी नियुक्ति समानता खंड के अनुसार सभी पात्र व्यक्तियों की उम्मीदवारी पर विचार करने के बाद की जाती है। सेवा की स्वत: समाप्ति की शर्त के साथ नियुक्ति को एक विशेष तिथि तक सीमित करने की नियोक्ता की कार्रवाई । जबकि पद समाप्त नहीं हुआ है और नियमित रूप से चयनित व्यक्ति उपलब्ध नहीं है. इसे पूरी तरह से मनमाना, अतार्किक माना जाएगा । .

अन्यायी , दमनकारी और अचेतन और वही होने के लिए उत्तरदायी है
संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 के विपरीत होने के कारण रद्द कर दिया गया, (पैरा 24)

भारत का संविधान, 1950- *कला।* 14 और 16-याचिकाकर्ता की तदर्थ *नियुक्ति इस शर्त के साथ कि सेवाएं* निश्चित तिथि पर समाप्त हो जाएंगी-याचिकाकर्ता को चुनौती देने से नहीं रोका गया है

वही- अनुबंध में दी गई सेवा की शर्तें या रोजगार की शर्तें
की ऐसी शर्त कला का उल्लंघन है । 14 एवं 16.

माना गया कि उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून के आलोक में
' और वीणा में किए गए अवलोकन रानी के मामले में हमें इसका कोई कारण नहीं मिलता स्वीकार करें कि याचिकाकर्ता को अनुबंध पी-1 में शामिल नियमों और शर्तों पर सवाल उठाने से रोका जाना चाहिए।

(पैरा 29)

आगे कहा गया, कि हम इस रिट याचिका को स्वीकार करते हैं और इसकी घोषणा करते हैं अनुबंध पी-1 में निहित शर्त उसकी नियुक्ति को सीमित करती है
याचिकाकर्ता की 30 जून, 1995 तक इस शर्त के साथ कि उसकी सेवा-
बुराई समाप्त हो जाएगी और उसे राहत मिलेगी
30 जून, 1995 को मनमाना, दमनकारी , अचेतन और असंवैधानिक .

(पैरा ए 4))

भारत का संविधान, 1950- *कला।* 14 एवं 16- *नियुक्तियाँ- सभी यह आवश्यक है कि नियुक्तियाँ समानता के नियमों के अनुरूप हों कला में निहित है.* 14 और 16- *लाईज़ेज़ -फेयर का सिद्धांत अब लागू नहीं है।*

आयोजित , , कि भारत के संविधान के प्रारंभ होने से पहले
रोज़गार सेवा के अनुबंध द्वारा शासित होता था। हालाँकि, 26 जनवरी के बाद. 1950 हमारे देश में लेज़ेज़ -फेयर के सिद्धांत को अब मान्यता नहीं मिली है और नियोक्ता, निजी और साथ ही सार्वजनिक, को रोजगार की शर्तों को निर्धारित करने की पूर्ण स्वतंत्रता का आनंद नहीं मिलता है। सार्वजनिक रोजगार को संविधान में निहित प्रावधानों के साथ-साथ विभिन्न विधायी अधिनियमों द्वारा नियंत्रित किया जाता है। कला. 14 और 16 और संविधान के अनुच्छेद 309 के प्रावधान के तहत बनाए गए नियम सार्वजनिक नियोक्ता के रोजगार के नियम और शर्तें निर्धारित करने के अधिकार को विनियमित करते हैं।

(पैरा 9)

इसके अलावा, यह माना गया कि सार्वजनिक रोजगार को सार्वजनिक संपत्ति के रूप में मान्यता दी गई है और समान रूप से स्थित सभी व्यक्तियों को संपत्ति के इस रूप को साझा करने का अधिकार है। इसलिए। सार्वजनिक सेवाओं में सभी नियुक्तियाँ अनुच्छेद 14 और 16 में निहित नियमों और समानता खंडों के अनुसार की जानी आवश्यक हैं।

(पैरा 9)

आर के मलिक , वकील, की ओर *से याचिकाकर्ता.*

प्रतिवादियों की ओर से आरएन रैना , डीएजी हरियाणा।

प्रलय

_ जी ।। एस ।। सिंघवी , जे .

(1) इस रिट याचिका में याचिकाकर्ता ने उप-प्रिंसिपल, सरकारी व्यावसायिक शिक्षा संस्थान, नौल्था द्वारा जारी 29 जून, 1995 (अनुलग्नक पी.3) के आदेश को रद्द करने की प्रार्थना की है। - (पानीपत), 29 जून, 1995 की दोपहर से उनकी सेवा समाप्त कर दी गई।

(2) निर्विवाद तथ्य यह है कि निदेशक, औद्योगिक प्रशिक्षण और व्यावसायिक शिक्षा, हरियाणा ने रोजगार कार्यालयों को भाषा शिक्षकों (अंग्रेजी) के 13 पदों पर भर्ती के लिए पात्र व्यक्तियों के नाम भेजने के लिए कहा था। याचिकाकर्ता, जो अनुसूचित जाति का सदस्य है और जो रोजगार कार्यालय में पंजीकृत था, को भाषा शिक्षक (अंग्रेजी) के रूप में चयन और नियुक्ति के लिए प्रायोजित किया गया था। प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा एक चयन समिति का गठन किया गया था और उसकी सिफारिशों पर आदेश (अनुलग्नक पीआई) दिनांक 2 मार्च, 1995 को प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा जारी किया गया था, जिसमें याचिकाकर्ता को रुपये के वेतनमान में भाषा शिक्षक (अंग्रेजी) के रूप में नियुक्त किया गया था। 30 जून को समाप्त होने वाली निश्चित अवधि के लिए विशुद्ध रूप से *तदर्थ आधार* पर 1,400-1,600 । 1995 इस शर्त के साथ कि उसकी सेवा 30 जून, 1995 को समाप्त हो जाएगी। नियुक्ति आदेश के अनुसार, याचिकाकर्ता 8 मार्च, 1995 को सेवा में शामिल हुई, 29 जून, 1995 को वाइस प्रिंसिपल, सरकारी व्यावसायिक शिक्षा केशन इंस्टीट्यूट, नौल्था (पानीपत) ने नियुक्ति पत्र में शामिल शर्तों के अनुसार 29 जून, 1995 की दोपहर को याचिकाकर्ता को कार्यमुक्त करके उसकी सेवा समाप्त कर दी। रिकॉर्ड से यह भी पता चला है कि भाषा शिक्षकों (अंग्रेजी) के 13 पदों पर नियमित भर्ती की मांग अधीनस्थ सेवा चयन बोर्ड, हरियाणा को भेजी गई है, लेकिन उक्त बोर्ड ने अभी तक नियमित नियुक्ति के लिए कोई सिफारिश नहीं की है। इन पदों के लिए उम्मीदवार

(3) याचिकाकर्ता ने नियुक्ति पत्र में शामिल शर्तों की वैधता, औचित्य और निष्पक्षता को इस आधार पर चुनौती दी है कि जब नियमित पद उपलब्ध हैं और पात्र व्यक्तियों की उम्मीदवारी पर उचित विचार के बाद *तदर्थ आधार पर नियुक्ति की गई है।* और चयन समिति की सिफ़ारिश पर नियुक्ति को 30 जून, 1995 तक सीमित करने और फिर इस आधार पर उसकी सेवा समाप्त करने का कोई औचित्य नहीं हो सकता कि नियुक्ति सीमित अवधि के लिए थी।

उन्होंने यह भी दलील दी है कि जब पद रिक्त पड़े हैं और रिक्त पदों पर नियमित रूप से चयनित अभ्यर्थियों को नियुक्ति के लिए उपलब्ध नहीं कराया गया है , तो उनकी सेवा समाप्त करने का कोई औचित्य नहीं हो सकता है।

(4) उत्तरदाताओं ने इस आधार पर विवादित कार्रवाई को उचित ठहराया है कि उनकी कार्रवाई नियुक्ति पत्र में शामिल नियमों और शर्तों के अनुरूप है। उनके मामले का मुख्य मुद्दा यह है कि पूरी तरह से *तदर्थ* आधार पर नियुक्त व्यक्ति को पद धारण करने का अधिकार नहीं मिलता है और इसलिए ऐसे *तदर्थ* नियुक्त व्यक्ति के पक्ष में कोई रिट जारी नहीं की जा सकती है। उत्तरदाताओं का आगे कहना है कि उन्हें नियुक्ति पत्र में शामिल नियमों और शर्तों के आधार पर नियुक्ति करने का अधिकार है और ऐसी *तदर्थ* या अस्थायी नियुक्ति के कारण किसी भी व्यक्ति के पक्ष में कोई अधिकार निहित नहीं है।

(5) श्री याचिकाकर्ता के वकील मलिक ने तर्क दिया कि, याचिकाकर्ता की नियुक्ति की शर्तों को 30 जून, 1995 तक सीमित करना उत्तरदाताओं की कार्रवाई है। यह स्वयं मनमाना और अनुचित है क्योंकि याचिकाकर्ता की नियुक्ति एक विधिवत गठित चयन समिति द्वारा किए गए चयन से पहले की गई थी। उन्होंने प्रस्तुत किया कि 'जब भाषा शिक्षकों के नियमित पद उपलब्ध हों और। अधीनस्थ सेवा चयन बोर्ड द्वारा चयनित अभ्यर्थियों को उपलब्ध नहीं कराया गया है, ऐसे में एक शर्त के साथ नियुक्ति देने के बजाय निश्चित शर्तों पर नियुक्ति देने का कोई औचित्य नहीं हो सकता है कि अधीनस्थ सेवा चयन बोर्ड द्वारा चयनित अभ्यर्थियों की उपलब्धता पर नियुक्ति समाप्त कर दी जाएगी। चयन बोर्ड श्री मलिक ने आगे तर्क दिया कि उत्तरदाता पूरी तरह से दमनकारी और अनुचित सेवा शर्तों को शामिल करने के लिए अपनी प्रभुत्व स्थिति का लाभ नहीं उठा सकते हैं और फिर कर्मचारी की हानि के लिए ऐसी शर्तों का उपयोग नहीं कर सकते हैं। उन्होंने 1994 के सीडब्ल्यूपी नंबर 3037 (डॉ. *सूबेदार सिंह आर्य और अन्य* बनाम हरियाणा *राज्य और अन्य)* में इस न्यायालय के 12 मई 1994 के फैसले पर भरोसा किया और उस विशेष अनुमति याचिका संख्या 19328-19337 को नियुक्त किया। इस न्यायालय के फैसले के खिलाफ हरियाणा राज्य द्वारा दायर 1994 को उच्चतम न्यायालय ने 27 मार्च को खारिज कर दिया। 1995

रिट याचिकाकर्ता को नोटिस के बाद । उन्होंने 1994 *वीना* के सीडब्ल्यूपी नंबर 6276 में इस न्यायालय के एक फैसले पर भी भरोसा जताया। *रानी और* अन्य वी . . हरियाणा राज्य और अन्य) पर 6 जुलाई, 1994 को निर्णय लिया गया । . पर। दूसरी तरफ। श्री रैना ने तर्क दिया कि नियुक्ति पत्र में निहित नियमों और शर्तों को स्वीकार करने और उत्तरदाताओं द्वारा दी गई नियुक्ति का लाभ उठाने के बाद, याचिकाकर्ता पलट नहीं सकता और पत्र में निहित शर्तों को चुनौती नहीं दे सकता (अनुलग्नक पीआई)। श्री रैना ने आगे ये भी तर्क दिया

से याचिकाकर्ता को अनुबंध पाई में निहित शर्तों की संवैधानिकता या औचित्य पर सवाल उठाने से रोक दिया गया है। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि एक *तदर्थ शिक्षक को* पद पर बने रहने का अधिकार नहीं है और ऐसी नियुक्ति का कोई अधिकार नहीं हो सकता *है* । उसकी सेवा समाप्ति को चुनौती देने के लिए। उन्होंने 24 जनवरी, 1995 को दिए गए 1994 के सीडब्ल्यूपी नंबर 13333 में इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया।

(6) जब मामला 18 जुलाई 199 को विचारार्थ आया तो न्यायालय ने इस तथ्य पर ध्यान दिया कि असंख्य मामले विचाराधीन हैं।
नियुक्ति आदेश/पत्र में शामिल शर्तों के आधार पर उनकी सेवाओं की समाप्ति के खिलाफ *तदर्थ नियुक्त व्यक्तियों* द्वारा इस न्यायालय के समक्ष दायर किया गया था, जिसमें दिखाया गया था कि नियुक्ति एक निश्चित अवधि के लिए थी और *तदर्थ* नियुक्त व्यक्तियों की सेवा समाप्त हो जाएगी। नियुक्ति आदेश/पत्र में निर्धारित अवधि की समाप्ति पर स्वतः समाप्त हो जायेगी। न्यायालय ने महसूस किया कि सरकार के लिए रिक्त पदों पर निश्चित अवधि के लिए *तदर्थ नियुक्तियाँ करने और फिर* नियमित रूप से चयनित उम्मीदवारों की उपलब्धता के बिना भी ऐसे *तदर्थ* नियुक्तियों की सेवाओं को समाप्त करने की प्रथा को जारी रखने का कोई औचित्य नहीं है। संबंधित सरकारी विभाग को विभिन्न प्रयोजनों के लिए कर्मचारियों की सेवाओं की आवश्यकता होती है। इसलिए प्रतिवादी नंबर 2 को यह निर्देश देना उचित समझा गया कि वह अदालत को सरकार की स्थिति समझाने के लिए व्यक्तिगत रूप से उपस्थित रहे और यह भी बताए कि इस अदालत द्वारा पारित विभिन्न आदेशों के निरंतर उल्लंघन के लिए कार्रवाई क्यों नहीं की जानी चाहिए। आज श्री आर.के. गर्ग , निदेशक। औद्योगिक प्रशिक्षण और व्यावसायिक शिक्षा हरियाणा, व्यक्तिगत रूप से उपस्थित हुए और कहा कि यद्यपि उनके विभाग में भाषा शिक्षकों (अंग्रेजी!) के पद उपलब्ध हैं और पाठ्यक्रम में प्रवेश पाने वाले छात्रों को पढ़ाने की आवश्यकता है, इसके मद्देनजर निश्चित अवधि की नियुक्तियाँ दी जा रही हैं। सरकार द्वारा जारी निर्देश उन्होंने आगे कहा कि

सरकार ने विभिन्न विभागों को सीमित अवधि के लिए *तदर्थ* और अस्थायी नियुक्तियां करने और कार्यकाल समाप्त होने पर पदधारियों की सेवाएं समाप्त करने का निर्देश दिया है। न्यायालय द्वारा पूछे गये एक प्रश्न पर श्री गर्ग ने स्वीकार किया कि सरकार द्वारा भाषा शिक्षकों के पदों को समाप्त करने का कोई आदेश पारित नहीं किया गया है। उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि भाषा शिक्षकों (अंग्रेजी) का काम समाप्त नहीं हुआ है और नई *तदर्थ* नियुक्तियाँ की जाएंगी।
से मिलने के लिए तत्काल भविष्य में किए जाने की आवश्यकता है
शिक्षकों की आवश्यकता .

(7) ऊपर जो कहा गया है, उससे यह स्पष्ट है कि औद्योगिक क्षेत्र में भाषा शिक्षकों (अंग्रेजी) के रिक्त पद उपलब्ध थे

प्रशिक्षण और व्यावसायिक शिक्षा विभाग और याचिकाकर्ता जैसे व्यक्तियों को इन रिक्त पदों पर तब नियुक्त किया गया जब उनके नाम रोजगार कार्यालयों द्वारा प्रायोजित किए गए थे और *तदर्थ* नियुक्ति के लिए उनकी उपयुक्तता चयन समिति द्वारा तय की गई थी। रिकॉर्ड से यह भी पता चलता है कि अधीनस्थ सेवा चयन बोर्ड, हरियाणा द्वारा चयनित उम्मीदवारों को इन पदों पर नियमित नियुक्ति के लिए उपलब्ध नहीं कराया गया है और इसके अलावा भाषा शिक्षकों (अंग्रेजी) का कार्य अभी भी मौजूद है और शिक्षक जो छात्र रहे हैं उन्हें पढ़ाना आवश्यक होगा पाठ्यक्रम में प्रवेश दिया गया ।

(8) इन तथ्यों की पृष्ठभूमि में हमें यह तय करना होगा कि क्या सरकार को नियुक्ति आदेश/पत्र में सेवा की किसी भी शर्त को शामिल करने और फिर उसका उपयोग अपने अनुसार कर्मचारियों की सेवाएं समाप्त करने के लिए बेलगाम और अनियंत्रित अधिकार प्राप्त है? मधुर इच्छा. एक सहायक प्रश्न जिसके लिए निर्णय की आवश्यकता होगी वह यह है कि क्या कोई व्यक्ति जिसने नियुक्ति आदेश/नियुक्ति पत्र के आधार पर रोजगार स्वीकार कर लिया है जिसमें यह शर्त है कि उसकी सेवा एक विशेष अवधि के अंत में समाप्त हो जाएगी, उसे चुनौती देने से रोका जा सकता है। रोज़गार की शर्तें या सेवा की शर्तें।

(9) भारत के संविधान के प्रारंभ से पहले सरकार में रोजगार सेवा के अनुबंध द्वारा शासित होते थे। हालाँकि, 26 जनवरी, 1950 के बाद हमारे देश में अहस्तक्षेप के सिद्धांत को मान्यता नहीं मिली और निजी तथा सार्वजनिक नियोक्ता को रोजगार की शर्तें निर्धारित करने की पूर्ण स्वतंत्रता नहीं है। सार्वजनिक रोजगार को संविधान में निहित प्रावधानों के साथ-साथ विभिन्न विधायी अधिनियमों द्वारा नियंत्रित किया जाता है। अनुच्छेद 14 और 16 और संविधान के अनुच्छेद 309 के प्रावधानों के तहत बनाए गए नियम सार्वजनिक नियोक्ता के रोजगार की शर्तें निर्धारित करने के अधिकार को विनियमित करते हैं। जहां वैधानिक नियम केंद्र और राज्य सरकारों के तहत नियुक्त कर्मचारियों की भर्ती और सेवा की शर्तों को विनियमित नहीं करते हैं, वहां संबंधित सरकारों द्वारा उक्त उद्देश्य के लिए प्रशासनिक निर्देश जारी किए जा सकते हैं। भारत के संविधान के अनुच्छेद 309 के प्रावधानों के तहत बनाए गए नियम और सार्वजनिक सेवाओं में भर्ती को विनियमित करने के लिए सरकार द्वारा जारी किए गए प्रशासनिक निर्देश संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 में निहित समान खंडों के अनुरूप होने चाहिए। सार्वजनिक-रोजगार को सार्वजनिक संपत्ति के रूप में मान्यता दी गई है और समान रूप से स्थित सभी व्यक्तियों को संपत्ति के इस रूप को साझा करने का अधिकार है। इसलिए सार्वजनिक सेवाओं में सभी नियुक्तियाँ अनुच्छेद 14 और 16 में निहित नियमों और समानता खंडों के अनुसार की जानी आवश्यक हैं। आम तौर पर नियम और विनियम

विचार करें लेकिन विभिन्न प्रकार की स्थितियों से निपटने के लिए *तदर्थ आधार* पर या तत्काल अस्थायी आधार पर नियुक्ति करने के नियोक्ता के अधिकार को भी न्यायालयों द्वारा मान्यता दी गई है। फिर भी *तदर्थ या अत्यावश्यक अस्थायी आधार* पर नियुक्ति करते समय प्रत्येक सार्वजनिक नियोक्ता सभी समान स्थिति वाले व्यक्तियों के मामलों पर विचार करने के लिए बाध्य है और इस तरह के विचार से इनकार करने पर नियोक्ता को बर्खास्त किया जा सकता है। नियुक्ति ।

(10) *डॉ. स्वयंबर प्रसाद सुद्रानिया में* बनाम *राजस्थान राज्य और अन्य* (1), पीएन सिंघल , जे. (जैसा कि वह तब थे) ने माना कि निश्चित अवधि के लिए *तदर्थ* नियुक्ति करते समय राज्य सभी पात्र और समान स्थिति वाले व्यक्तियों के मामलों पर विचार करने के लिए बाध्य है। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा भी यही सिद्धांत प्रतिपादित किया गया है *हरियाणा राज्य* बनाम *पियारा सिंह* (2)। उस मामले में सुप्रीम कोर्ट ने व्यवस्था दी है कि *तदर्थ* नियुक्ति के लिए भी नियोक्ता को या तो समाचार पत्र में अल्पकालिक विज्ञापन जारी करना चाहिए या प्रकाशन के किसी अन्य मान्यता प्राप्त तरीके को अपनाना चाहिए और उन सभी की उम्मीदवारी पर विचार करना चाहिए जो पात्र हैं और जो ऐसे विज्ञापन के अनुसरण में आवेदन करें।

तदर्थ/ अत्यावश्यक अस्थायी आधार पर नियुक्ति करने की पद्धति केंद्र और राज्य सरकारों सहित लगभग सभी सार्वजनिक नियोक्ताओं द्वारा अपनाई गई है । ऐसा विशेषकर शिक्षकों और डॉक्टरों के मामले में होता है। विभिन्न सरकारों को लगातार इस बात का एहसास है कि बच्चों को शिक्षा प्रदान करने के लिए शिक्षकों की आवश्यकता होती है और जब तक शिक्षा प्रदान करने के लिए सुसज्जित हाथ उपलब्ध नहीं होंगे, संवैधानिक लक्ष्य, अर्थात् "सभी के लिए शिक्षा" एक दूर की वास्तविकता बनी रहेगी। सरकारें भी इस तथ्य से अवगत हैं कि लोक सेवा आयोग और अन्य चयन एजेंसियां चयन की औपचारिकताएं पूरी करने में अपना समय लेती हैं, लेकिन बच्चों की शिक्षा के लिए इतने लंबे समय तक इंतजार नहीं किया जा सकता। इसलिए, शिक्षा की माँगों को पूरा करने के लिए और व्यापक जनहित को ध्यान में रखते हुए, सरकारें शिक्षकों की *तदर्थ नियुक्तियों की पद्धति का सहारा लेती रही हैं।* की इस नीति में कोई दोष ढूंढना कठिन है सरकार शिक्षकों की *तदर्थ नियुक्ति* करेगी । फिर भी प्रशासनिक अधिकारियों द्वारा इस नीति के कार्यान्वयन से मुकदमेबाजी की अंतहीन शृंखला शुरू हो गई है । जो शक्ति उसके पास है

(1) 1971 (2) एस.एल.जे.
767. (2) 1992 (4) एससीसी
118।

एटीए ए

तदर्थ नियुक्ति करने के लिए प्रशासनिक प्राधिकारियों का , कई अवसरों पर, नियमित पदों के विरुद्ध निश्चित अवधि की नियुक्तियाँ देकर और फिर नई *तदर्थ* नियुक्तियाँ करने के लिए ऐसे नियुक्तियों की सेवाओं को समाप्त करके दुरुपयोग किया गया है। शिक्षकों को कुछ दिनों या महीनों के लिए इस शर्त के साथ नियुक्ति देना एक सामान्य प्रथा बन गई है कि ऐसे शिक्षकों की सेवाएं निर्दिष्ट तिथि पर समाप्त हो जाएंगी और इसके अलावा नियुक्ति प्राधिकारी अपने पास रोजगार समाप्त करने का अधिकार सुरक्षित रखता है। किसी भी समय बिना किसी सूचना के और बिना कोई कारण बताए।

(12) एक निश्चित अवधि के लिए *तदर्थ नियुक्ति* करने की पद्धति इस शर्त के साथ कि नियुक्ति समाप्त हो जाएगी

निर्दिष्ट तिथि को *नियुक्तियां रतन लाई और अन्य* बनाम *हरियाणा राज्य और अन्य* (3) में सर्वोच्च न्यायालय की जांच के दायरे में आईं। यह एक ऐसा मामला था जिसमें सरकार शैक्षणिक सत्र के अंत तक *तदर्थ* नियुक्ति की पद्धति का सहारा ले रही थी और फिर गर्मियों की छुट्टियों के बाद नई नियुक्तियां दे रही थी। सर्वोच्च न्यायालय ने पाया कि हरियाणा राज्य सरकार नियमों के अनुसार शिक्षकों की नियुक्ति करने के अपने कर्तव्य का निर्वहन करने में विफल रही है और उसने पाया कि शिक्षकों को नियमित रूप से चयनित व्यक्तियों को मिलने वाले लाभों से वंचित करने के लिए *तदर्थ* नियुक्तियां की जा रही हैं। सर्वोच्च न्यायालय ने कहा: -

> " .इन *तदर्थ* शिक्षकों को अनावश्यक रूप से मनमाने ढंग से 'भर्ती और बर्खास्तगी' नीति के अधीन किया जाता है। *ये शिक्षक जो शिक्षित बेरोजगारों का बड़ा हिस्सा हैं सेवा की दयनीय स्थितियों* के साथ *इन नौकरियों को* तदर्थ *आधार पर स्वीकार करने के लिए मजबूर किया गया । ऐसा प्रतीत होता है कि सरकार इस स्थिति का फायदा उठा रही है। यह एक अच्छी कार्मिक* नीति नहीं है. इसका शिक्षण संस्थानों और वहां पढ़ने वाले बच्चों पर गंभीर असर पड़ना तय है। राज्य सरकार द्वारा लंबे समय तक अपनाई गई ' तदर्थवाद ' की नीति के कारण संविधान के अनुच्छेद 14 और अनुच्छेद 16 का उल्लंघन हुआ है। ऐसी स्थिति को अब और टिकने नहीं दिया जा सकता. यह कहने की आवश्यकता कम है कि राज्य सरकार से एक आदर्श नियोक्ता के रूप में कार्य करने की अपेक्षा की जाती है।" (अंडरलाइनिंग हमारी है)

इन-राज *बाला* बनाम पंजाब *राज्य* (सिविल मूल अपीलीय क्षेत्राधिकार मामला संख्या 125/87) सर्वोच्च न्यायालय के उनके आधिपत्य ने उन्हें स्वीकार *कर लिया*

(3) एआईआर 1987 एससी 478।

आर

नियमित रूप से चयनित उम्मीदवारों की उपलब्धता तक *तदर्थ नियुक्तियों* द्वारा सेवा में बने रहने का दावा ।

राज बाला मामले (सुप्रा) में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश इस प्रकार है।

"भारत के सर्वोच्च न्यायालय में सिविल मूल अधिकार क्षेत्र रिट याचिका संख्या

125/1987।

राज बाला एवं अन्य,— *याचिकाकर्ता,*

बनाम

पंजाब राज्य एवं अन्य, —*प्रतिवादी।*

आदेश

दोनों पक्षों की समझाइश सुनी। ऐसा प्रतीत होता है कि एक सिमी उनके न्यायालय द्वारा 24 अगस्त 1987 को रिट याचिका संख्या 317/1987 में एक मामले का निपटारा कर दिया गया, जिसमें न्यायालय ने निर्देश दिया:

पक्षों के विद्वान वकील को सुनने के बाद, हम रिट याचिका को स्वीकार करते हैं और उत्तरदाताओं को निर्देश देते हैं कि वे याचिकाकर्ताओं को सेवा में तब तक जारी रखें जब तक कि पंजाब सेवा आयोग द्वारा नियमित रूप से चयनित व्यक्तियों को याचिकाकर्ताओं द्वारा वर्तमान में रखे गए पदों पर नियुक्त नहीं किया जाता है और इन पदों पर शामिल नहीं हो जाते हैं। - ये याचिकाकर्ता जिन्हें अवकाश रिक्त पदों पर नियुक्त किया गया है, वे इन पदों पर तब तक बने रहेंगे जब तक कि अवकाश पर गए कर्मचारी वापस आकर इन पदों पर शामिल नहीं हो जाते।

हम इस रिट याचिका का निपटान यह आदेश देकर करते हैं कि एक स्पष्टीकरण के अधीन कि पंजाब राज्य को नियमित भर्ती को किसी अन्य संस्थान से किसी भी संस्थान में स्थानांतरित करके किसी भी याचिकाकर्ता की सेवाओं को समाप्त करने की अनुमति नहीं दी जाएगी जहां कोई भी याचिकाकर्ता हो सकता है। सेवा करना. लोक सेवा आयोग के माध्यम से सीधी भर्ती होने पर ही सेवा समाप्ति मान्य होगी
ऐसे पदों पर भर्ती

एसडी / -रंगनाथ मिश्रा , जे.

एसडी /- एस. रंगनाथन , जे.

(13) आधिपत्य रअजविंदर *सिंह* बनाम *पंजाब राज्य और अन्य* (4) में । उनके सर्वोच्च न्यायालय ने *तदर्थ के दावे को स्वीकार कर लिया*

(4) 1988 (1) एसएलआर 351.

व्याख्याता को सेवा में जारी रखा जाएगा। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित किया गया उस स्थिति में निम्नलिखित आदेश होगा: —

याचिकाकर्ता *तदर्थ* व्याख्याता है। उन्हें एक कार्यकाल के लिए नियुक्त किया गया था। उनकी शिकायत यह है कि उन्हें सेवा से हटा दिया जाएगा ताकि वे अपने अवकाश वेतन से वंचित हो जाएं। ऐसा प्रतीत होता है कि उत्तरदाताओं की आदत हर बार नये लोगों को नियुक्त करने की है।

2. इस न्यायालय ने कई रिट याचिकाओं (डब्ल्यूपी 125/87 और 317/1987) में *तदर्थ* शिक्षकों को सेवा में बने रहने की अनुमति दी है, जबकि पीएससी द्वारा नियमित रूप से चयनित व्यक्तियों को पदों पर नियुक्त किया जाता है। प्रतिवादी को उस आदेश का लाभ अन्य सभी *तदर्थ* व्याख्याताओं को देना चाहिए। समान राहत के लिए उन्हें इस अदालत में ले जाना उचित नहीं है । हम यह स्पष्ट करते हैं कि याचिकाकर्ता और अन्य समान *तदर्थ* शिक्षक उपरोक्त रिट याचिका में दिए गए इस न्यायालय के आदेश का लाभ पाने के हकदार हैं। याचिका मंजूर।"

(14) *हरियाणा राज्य* बनाम *पियारा सिंह* (सुप्रा) में सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि एक *तदर्थ या अस्थायी कर्मचारी को किसी अन्य तदर्थ या अस्थायी कर्मचारी* द्वारा प्रतिस्थापित नहीं किया जाना चाहिए और उसे केवल नियमित रूप से चयनित कर्मचारी द्वारा प्रतिस्थापित किया जाना चाहिए। सुप्रीम कोर्ट के अनुसार, नियुक्ति प्राधिकारी की ओर से मनमानी कार्रवाई से बचने के लिए यह आवश्यक था।

13 अगस्त, 1984 को निर्णीत सी.डब्लू.पी. संख्या 1551 से 1594/1984 *(साहिब सिंह* बनाम *चंडीगढ़ संघ राज्य क्षेत्र एवं अन्य) में सर्वोच्च न्यायालय के माननीय न्यायाधीशों ने निर्देश दिया था कि याचिकाकर्ता, जिन्हें तदर्थ* आधार पर नियुक्त किया गया था, तब तक सेवा में बने रहेंगे जब तक कि सरकार लोक सेवा आयोग की सिफारिशों पर नियमित नियुक्तियां नहीं कर देती।

(16) 1994 के सीडब्ल्यूपी नंबर 3037 में *{डॉ. सुजेदार सिंह आर्य और* 17 *अन्य* बनाम *हरियाणा राज्य और अन्य)* का फैसला 12 मई को हुआ। 1994, इस न्यायालय की एक खंडपीठ को एक प्रश्न पर निर्णय लेने के लिए बुलाया गया था जो लगभग उस प्रश्न के समान था जो हमारे सामने रखा गया था। उस मामले में याचिकाकर्ताओं ने 15 मार्च, 1994 तक उनकी *तदर्थ* नियुक्तियों को प्रतिबंधित करने की राज्य सरकार की कार्रवाई को संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 का उल्लंघन बताते हुए चुनौती दी थी। उस मामले में उत्तरदाताओं ने *सेंट राम भाल की इस अदालत की पूर्ण पीठ के फैसले पर भरोसा जताया।* बनाम *हरियाणा राज्य और अन्य* (5), *धर्मबीर सिंह* बनाम *हरियाणा राज्य और अन्य* (6),

(5) 1992 (1) आरएसजे 761।
(6) 1993 (2) सेवा मामले आज 654।

और *इस न्यायालय के एक* निर्णय *पर* भी एस . डिवीजन बेंच ने सुप्रीम कोर्ट और इस न्यायालय के विभिन्न निर्णयों का संदर्भ दिया और माना कि *संत राम भाल के मामले* (सुप्रा), *धर्मबीर सिंह के मामले* (सुप्रा) और एस . *के. वर्मा के मामले* (सुप्रा) में निर्धारित कानून लागू नहीं हुआ। डिवीजन बेंच के समक्ष उठाए गए मुद्दे से इसका कोई सीधा संबंध नहीं है। डिवीजन बेंच ने माना कि निश्चित अवधि के लिए *तदर्थ* नियुक्तियाँ करना पूरी तरह से मनमाना और अनुचित था। *डॉ. सूबेदार सिंह आर्य के मामले* (सुप्रा) में न्यायालय द्वारा की गई निम्नलिखित टिप्पणियाँ काफी शिक्षाप्रद हैं: -

> के अलावा कि याचिकाकर्ताओं का दावा माननीय सर्वोच्च न्यायालय के अनुपात को देखते हुए अच्छी तरह से स्थापित है, हम यह जोड़ सकते हैं कि *विशिष्ट अवधि के लिए या एक विशेष सत्र के लिए और उसके बाद व्याख्याताओं की अस्थायी नियुक्ति करने में सरकार* की *नीति - उनकी सेवाओं को समाप्त करना और नई नियुक्तियों का सहारा लेना और इस प्रकार अगले सत्र में और उसके बाद के सत्र में उसी प्रक्रिया को दोहराना पूरी तरह से मनमाना और अनुचित है और भारत के संविधान के अनुच्छेद* 14 *और* 16 के प्रावधानों के विपरीत है ; नियुक्ति आदेश में मनमानी शर्तों का समावेश उचित नहीं है
>
> धारणीय । हम सीधे तौर पर देख सकते हैं कि सार्वजनिक रोजगार में नियुक्त व्यक्ति आमतौर पर उन नियमों और शर्तों को नहीं चुन सकता है जिनके तहत उसे नियोक्ता की सेवा करने की आवश्यकता होती है। नियोक्ता हमेशा एक प्रमुख स्थिति में होता है और यह नियोक्ता के लिए रोजगार की शर्तों को निर्धारित करने के लिए खुला है। जो कर्मचारी अंतिम छोर पर है, वह रोजगार के नियमों और शर्तों में मनमानी की शिकायत शायद ही कर सकता है। उस स्तर पर कर्मचारी द्वारा रोजगार के नियमों और शर्तों को कोई भी चुनौती देने पर उसकी नौकरी ही खत्म हो जाएगी। *नियोक्ता की शक्ति प्राप्त करने की सीमा इतनी अधिक होती है कि कर्मचारी के पास नियोक्ता द्वारा निर्धारित शर्तों को स्वीकार करने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचता है। यह अच्छी तरह से स्थापित है कि रोजगार की ऐसी शर्त जो मनमानी, अनुचित या अचेतन है, उसे अनुच्छेद* 14 के उल्लंघन के आधार पर असंवैधानिक घोषित किया जा सकता है ।

(7) ए.जे.आर. 1979 पंजाब और हरियाणा 149;

भारत के संविधान का 16 , जो अन्यथा भी *सार्वजनिक नीति का विरोध करता* है ।

(अंडरलाइनिंग हमारी है)

(17) हम यह भी उल्लेख कर सकते हैं कि *डॉ. सूबेदार सिंह आर्य के मामले (सुप्रा)* में डिवीजन बेंच के फैसले के खिलाफ , राज्य
ने सुप्रीम कोर्ट में विशेष अनुमति याचिका दायर की। 27 मार्च, 1995 को एसएलपी नंबर 19328/1994 और अन्य विशेष अनुमति याचिकाओं को खारिज करते हुए सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि राज्य ने पहले ही पदों का विज्ञापन कर दिया है और चयन के बाद इसे भरा जाएगा और इसे जारी रखने में कोई कठिनाई नहीं होगी। सेवा में उत्तरदाता. सुप्रीम कोर्ट ने यह आदेश रिट याचिकाकर्ताओं को नोटिस के बाद पारित किया था. इसलिए, यह मानना उचित है कि *डॉ. सूबेदार सिंह आर्य के मामले (सुप्रा)* में डिवीजन बेंच द्वारा व्यक्त किए गए विचारों को सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अनुमोदित किया गया है।

(18) 1994 के सीडब्ल्यूपी नंबर 6276 में (*वीणा)। रानी और अन्य* बनाम *हरियाणा राज्य और अन्य), का* फैसला 6 जुलाई को हुआ। 1994, इस न्यायालय की एक खंडपीठ, जिसमें हम में से एक सदस्य था, ने नियुक्ति पत्र में निहित शर्तों की वैधता का फैसला किया, जो समान थीं याचिकाकर्ता के नियुक्ति पत्र में निहित शर्तों के साथ सामग्री । उस मामले में याचिकाकर्ताओं ने शिक्षा विभाग के अधिकारियों द्वारा पारित आदेश को भी चुनौती दी थी, जिसमें नियुक्ति की अवधि समाप्त होने पर उन्हें कार्यमुक्त करने की मांग की गई थी। नियुक्ति को एक विशेष तिथि तक सीमित करने वाले नियुक्ति आदेश/पत्र में शामिल शर्तों पर टिप्पणी करते हुए , डिवीजन बेंच ने कहा: -

> ..यह वास्तव में न्यायालयों के लिए चिंता का विषय है कि ऐसी शर्तें उन लोगों की नियुक्ति के आदेशों में शामिल की जाती हैं जो रोजगार कार्यालय की एजेंसी या अल्पकालिक विज्ञापन के माध्यम से भर्ती किए जाते हैं। किसी व्यक्ति को कुछ दिनों या महीनों के लिए शिक्षक नियुक्त करके और फिर उसके स्थान पर दूसरे *व्यक्ति को नियुक्त करके सरकार व्यापक जनहित की सेवा कैसे कर सकती है। न्यायालय इस तथ्य पर ध्यान दे सकते हैं कि एक बार। व्यक्ति को शिक्षक/ व्याख्याता के रूप में नियुक्त किया जाता है और वह छात्रों को एक विशेष अवधि के लिए पढ़ाता है, वह कुछ अनुभव प्राप्त करता है, जिससे भविष्य के लिए उसकी दक्षता बढ़ जाती है। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि कुछ समय तक अपने छात्रों को पढ़ाने के बाद, एक शिक्षक छात्रों के साथ एक तालमेल स्थापित करता है और वह तालमेल छात्रों को उनकी शिक्षा में बहुत मदद करता है।* हमें यह नहीं समझना चाहिए कि तदर्थ आधार पर *शिक्षक/ व्याख्याता के रूप में नियुक्त व्यक्ति को पद धारण करने का अधिकार प्राप्त है*

> और *कि* उसे किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा प्रतिस्थापित नहीं किया जा सकता है जिसे *नियमित चयन* के लिए *निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार नियुक्त किया गया हो । हालाँकि, हम इस बात पर ज़ोर देना चाहते हैं शिक्षक की जगह नए शिक्षक की नियुक्ति करने की प्रथा न केवल नए* तदर्थ *नियुक्त व्यक्ति को नुकसान पहुंचाती है, बल्कि इससे जनहित को भी गंभीर नुकसान पहुंचता है।* यदि छात्रों को हर बार एक निश्चित अवधि या शैक्षणिक सत्र के अंत तक *तदर्थ* नियुक्ति देने की नीति की आड़ में नए और कच्चे लोगों से शिक्षण कराया जाता है, तो निश्चित रूप से यह कहा जा सकता है कि इससे छात्र समुदाय के अलावा किसी और को नुकसान नहीं होता है। एक व्यक्ति द्वारा शिक्षण की निरंतरता की अनुपस्थिति का परिणाम शिक्षक और शिष्य के बीच के तालमेल में स्वतः ही कमी आना है, जो अन्यथा बेहतर शिक्षा के लिए बिल्कुल जरूरी है।"

(जोर दिया गया-)

संत राम भाविस केस (सुप्रा) में पूर्ण बेंच के फैसले और डॉ. *सूबेदार सिंह आर्य के मामले* (सुप्रा) में डिवीजन बेंच के फैसले पर ध्यान दिया और कहा: -

> *सूबेदार सिंह आर्य के मामले* में डिवीजन बेंच ने जो कहा है, उसके अलावा , हम यह जोड़ सकते हैं कि *संत राम भाल के मामले* (सुप्रा) में, जो प्रश्न पूर्ण पीठ के समक्ष विचार के लिए रखे गए थे, वे पूरी तरह से अलग थे । प्रश्नों में से एक पूर्ण पीठ को यह जवाब देना था कि क्या उस व्यक्ति में कोई अधिकार सृजित हुआ है, जिसे *तदर्थ* आधार पर पदोन्नति दी गई है। दूसरा सवाल यह था कि क्या *तदर्थ* पदोन्नति को समाप्त करना और याचिकाकर्ता को उसके मूल पद पर वापस करना मनमाना और अनुचित था और परिणामस्वरूप भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन था । पूर्ण पीठ ने उन दो प्रश्नों का उत्तर दिया और माना कि जिस व्यक्ति को *तदर्थ* पदोन्नति दी गई है, उसे पद पर रहने का अधिकार नहीं है। उसे वापस किया जा सकता है उसे चुनौती देने का कोई कारण दिए बिना । हालाँकि पूर्ण पीठ ने कुछ टिप्पणियाँ करते हुए सुझाव दिया था कि जिस व्यक्ति को इस शर्त के साथ नियुक्ति दी जाती है कि वह किसी भी समय प्रत्यावर्तित होने के लिए उत्तरदायी है और यदि नियोक्ता नियुक्ति के आदेश के संदर्भ में अपने अधिकार का प्रयोग करता है, तो वह प्रत्यावर्तन की शिकायत नहीं कर सकता है। उन टिप्पणियों को के दायरे तक ही सीमित रखना होगा

प्रश्नों का संदर्भ , जिन्हें निर्णय के लिए पूर्ण पीठ को भेजा गया था। हमारी यह भी राय है कि एक बार सुप्रीम कोर्ट ने *हरियाणा राज्य* बनाम *पियारा सिंह के मामले (सुप्रा) में फैसला सुनाया था कि सरकार को किसी तदर्थ नियुक्त व्यक्ति* की सेवा समाप्त करने का अधिकार नहीं है, केवल उसके स्थान पर दूसरे *विज्ञापन* को नियुक्त करने का अधिकार नहीं है। *हॉक* नियुक्त व्यक्ति, पूर्ण पीठ की टिप्पणियाँ, यदि वे बिल्कुल भी उक्त आदेश के विपरीत हैं, तो उन्हें नजरअंदाज करना होगा। पूर्ण पीठ के निर्णय की व्याख्या, यदि प्रतिवादियों की ओर से उपस्थित विद्वान वकील द्वारा सुझाए गए तरीके से की जाती है, तो यह सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के विपरीत होगा और हमारी राय में, पूर्ण पीठ की ऐसी व्याख्या को स्वीकार करने का कोई कारण नहीं है। बेंच का फैसला. हमारा स्पष्ट मानना है कि निर्णय की घोषणा *डॉ. सूबेदार सिंह आर्य की है* मामला (सुप्रा) कानून की सही स्थिति को दर्शाता है।

(18) उपर्युक्त मामलों के अलावा, हम कुछ निर्णयों का उल्लेख करना उचित समझते हैं जो भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 की सामग्री और दायरे से संबंधित हैं। एस में *: जी जयसिंगियार्ड* बनाम । *भारत संघ* (8), रामास्वामी , जे. ने निम्नलिखित शब्दों में मनमानी की परीक्षा का संकेत दिया : -

"इस संदर्भ में इस बात पर ज़ोर देना ज़रूरी है कि मनमानी शक्ति का अभाव क़ानून के शासन की पहली अनिवार्यता है जिस पर हमारी पूरी संवैधानिक व्यवस्था आधारित है। कानून के शासन द्वारा शासित प्रणाली में, विवेकाधिकार, जब कार्यकारी अधिकारियों को दिया जाता है, तो उसे स्पष्ट रूप से परिभाषित सीमाओं के भीतर ही सीमित किया जाना चाहिए। इस दृष्टिकोण से कानून के शासन का अर्थ है कि निर्णय ज्ञात सिद्धांतों और नियमों को लागू करके किए जाने चाहिए। सामान्य तौर पर, ऐसे निर्णय पूर्वानुमेय होने चाहिए और नागरिक को पता होना चाहिए कि वह कहां है। यदि कोई निर्णय बिना किसी सिद्धांत या बिना किसी नियम के लिया जाता है तो यह अप्रत्याशित होता है और ऐसा निर्णय कानून के शासन के अनुसार लिए गए निर्णय के विपरीत होता है। (डिसी देखें - "संविधान का कानून" - दसवां संस्करण , परिचय पूर्व)। *संयुक्त राज्य अमेरिका* बनाम *सुंदरलिक* में डगलस, जे. ने कहा, "कानून अपने सर्वोत्तम क्षणों तक पहुंच गया है"। (1951-342 यूएस 98 : : 96 लॉ एड. 113)। "जब इसने मनुष्य को किसी शासक के असीमित विवेक से मुक्त कर दिया है.....जहाँ विवेक निरपेक्ष है, मनुष्य के पास है

(8) ए'.आईआर 1967 एससी 1427.

हमेशा कष्ट झेलना पड़ा"। इसी अर्थ में कानून के शासन को सनक का कट्टर शत्रु कहा जा सकता है; विवेक, जैसा कि जॉन विल्क्स (1770-98 ईआर 327) के मामले में लॉर्ड मैन्सलील्ड ने क्लासिक शब्दों में कहा था, "का अर्थ है कानून द्वारा निर्देशित ध्वनि विवेक। इसे नियम द्वारा नियंत्रित किया जाना चाहिए, हास्य से नहीं ; यह मनमाना, अस्पष्ट नहीं होना चाहिए और काल्पनिक।"

(19) *ईपी रोयप्पा* में *तमिलनाडु राज्य और दूसरा* (9), एक ■संविधान। सुप्रीम कोर्ट की बेंच ने अनुच्छेद 14 और 16 के बीच अंतर्संबंध की जांच की और पाया कि अनुच्छेद 14 जीनस है जबकि अनुच्छेद 16 एक प्रजाति है। उसके बाद उनके आधिपत्य निरीक्षण करने के लिए आगे बढ़े:

बी ..... इसलिए, मूल सिद्धांत जो अनुच्छेद '14 और 16 दोनों को सूचित करता है, भेदभाव के खिलाफ समानता और निवास है । अब, इस महान समानता सिद्धांत की सामग्री और पहुंच क्या है ?

बोस, जे. के शब्दों में कहें तो यह एक संस्थापक आस्था है, "जीवन का एक तरीका", और इसे पांडित्यपूर्ण या लेक्सिको ग्राफिक दृष्टिकोण के अधीन नहीं किया जाना चाहिए। हम इसके सर्वव्यापी दायरे और अर्थ को कम करने के किसी भी प्रयास को स्वीकार नहीं कर सकते , क्योंकि ऐसा करना इसके सक्रिय परिमाण का उल्लंघन होगा। समानता कई पहलुओं और आयामों वाली एक गतिशील अवधारणा है और इसे पारंपरिक और सैद्धांतिक सीमाओं के भीतर "बंधा, कैद और सीमित" नहीं किया जा सकता है। सकारात्मक दृष्टिकोण से, समानता मनमानी के विपरीत है। वास्तव में समानता और मनमानी शत्रु हैं; एक गणतंत्र में कानून के शासन से संबंधित है, जबकि दूसरा, एक पूर्ण राजा की सनक और सनक से संबंधित है । जहां कोई कार्य मनमाना है, वहां यह अंतर्निहित है कि यह राजनीतिक तर्क और संवैधानिक कानून दोनों के अनुसार असमान है और इसलिए अनुच्छेद 14 का उल्लंघन है, और यदि यह सार्वजनिक रोजगार से संबंधित किसी भी मामले को प्रभावित करता है, तो यह अनुच्छेद 16 का भी उल्लंघन है। अनुच्छेद 14 और 16 राज्य की कार्रवाई में मनमानी पर प्रहार करते हैं और उपचार की निष्पक्षता और समानता सुनिश्चित करते हैं। उन्हें आवश्यकता है कि राज्य की कार्रवाई सभी समान स्थितियों पर लागू होने वाले वैध प्रासंगिक सिद्धांतों पर आधारित होनी चाहिए और इसे किसी भी बाहरी या अप्रासंगिक विचारों द्वारा निर्देशित नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि यह समानता से इनकार होगा। जहां राज्य की कार्रवाई के लिए ऑपरेटिव कारण, मन की दहलीज से प्रेरित मकसद से अलग है, वैध और प्रासंगिक नहीं है, लेकिन अप्रासंगिक है और अनुमेय विचारों के क्षेत्र से बाहर है, यह शक्ति का *दुर्भावनापूर्ण* अभ्यास होगा और उस पर प्रहार किया जाएगा। अनुच्छेद 14 और 16 द्वारा .....

यह बताना भी जरूरी है कि अनुच्छेद 14 *और 16 का दायरा और पहुंच उन मामलों तक सीमित नहीं है जहां*

प्रभावित लोक सेवक को किसी पद का अधिकार है। भले ही कोई लोक सेवक स्थानापन्न पद पर हो, वह अनुच्छेद 14 और 16 के उल्लंघन की शिकायत कर सकता है यदि उसके साथ मनमाना या अनुचित व्यवहार किया गया हो या राज्य मशीन द्वारा शक्ति का *दुर्भावनापूर्ण प्रयोग किया गया हो। इसलिए, यह कहना अनुच्छेद* 14 *और* 16 *के उल्लंघन के आरोप का कोई जवाब नहीं है कि याचिकाकर्ता को मुख्य सचिव के पद पर कोई अधिकार नहीं था, बल्कि वह केवल उस पद पर कार्य कर रहा था।* इसकी अनुच्छेद 311 से कुछ प्रासंगिकता हो सकती है लेकिन अनुच्छेद 14 और 16 से नहीं।

(जोर दिया गया)।

(20) *रमाना* में *दयाराम शेट्टी* वी. *भारतीय अंतर्राष्ट्रीय हवाईअड्डा प्राधिकरण और अन्य* (10), सर्वोच्च न्यायालय के उनके आधिपत्य ने *विटारेल्ली में की गई टिप्पणियों को मंजूरी दे दी* वी. *सीटन* (12), द्वारा

श्री न्यायमूर्ति फ्रैंकफर्टर का मनमाने ढंग से अभ्यास के विरुद्ध नियम प्रशासनिक कानून का एक नियम है जिसे न्यायिक रूप से विकसित किया गया है। सुप्रीम कोर्ट ने आगे कहा कि कानून के शासन द्वारा शासित लोकतंत्र में कार्यकारी सरकार या उसके किसी भी अधिकारी के पास व्यक्ति के हितों पर मनमानी शक्ति नहीं होती है और प्रशासन की हर कार्रवाई को कारण के साथ सूचित किया जाना चाहिए और इससे मुक्त होना चाहिए। मनमानी करना। *मेसर्स कस्तूरी लाई लक्ष्मी रेड्डी, आदि* बनाम जम्मू और कश्मीर *राज्य और अन्य (11)* में , सर्वोच्च न्यायालय के उनके आधिपत्य ने माना कि सरकार की प्रत्येक गतिविधि में एक सार्वजनिक तत्व होता है और इसलिए इसे सूचित किया जाना चाहिए तर्क के साथ और सार्वजनिक हित द्वारा निर्देशित। *महाबीर ऑटो स्टोर्स और अन्य* बनाम *इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन और अन्य (13) मामले* में , यह माना गया था कि जब राज्य अपनी कार्यकारी शक्ति में कार्य करता है तो व्यक्ति के साथ एक संविदात्मक संबंध में प्रवेश करता है, अनुच्छेद 14 शक्ति के प्रयोग पर लागू होगा और यदि अनुबंध करने या न करने के मामले में भी सरकारी कार्रवाई तर्कसंगतता की कसौटी पर खरा नहीं उतरती है, तो वह अनुचित होगी। उनके आधिपत्य ने आगे माना कि मनमानेपन और भेदभाव के खिलाफ तर्क और नियम का नियम, निष्पक्षता और प्राकृतिक न्याय के नियम नागरिकों के साथ व्यवहार करने में राज्य के साधन द्वारा स्थिति या कार्रवाई में लागू कानून के शासन का हिस्सा हैं। *कुमारी* में *श्रीलेखा विद्यार्थी आदि* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य* (14), उनका

(10) एआईआर 1979 एससी 1628. (11) एआईआर 1980 एससी 1992. (12) (1959) 359 यूएस 535. (13) एटीआर 1990 एससी 1081. (14) एआईआर 1991 एससी 537.

कुमारी में उनके लॉर्डशिप द्वारा की गई कुछ टिप्पणियां श्रीलेखा विद्यार्थी मामले में मुख्य बिंदु इस प्रकार हैं:-

"इस समय इस बात पर अब कोई संदेह नहीं किया जा सकता है कि भारत के संविधान का अनुच्छेद 14 सरकारी नीति के मामलों पर भी लागू होता है और यदि अनुबंध संबंधी मामलों में भी सरकार की नीति या कोई कार्रवाई तर्कसंगतता की कसौटी पर खरा नहीं उतरती है, यह असंवैधानिक होगा । जबकि कार्यकारी शक्ति के प्रयोग में नीति को बदलने का विवेक , जब क़ानून या नियम से बाधित न हो, व्यापक माना गया था, संविधान के अनुच्छेद 14 में इसे अनिवार्य और अंतर्निहित बताया गया था। नीति को निष्पक्ष रूप से बनाया जाना चाहिए और यह आभास नहीं देना चाहिए कि यह मनमाने ढंग से या किसी गुप्त मानदंड से किया गया था, अनुच्छेद 14 की व्यापक व्यापकता और इस कसौटी पर इसकी वैधता के लिए प्रत्येक राज्य की कार्रवाई की आवश्यकता , चाहे जो भी हो। राज्य की गतिविधि का क्षेत्र है बहुत पहले ही तय हो चुका है. इस न्यायालय के बाद के निर्णयों ने इस सिद्धांत की नींव को मजबूत किया है और

इस उद्देश्य के लिए इस न्यायालय के केवल दो हालिया निर्णयों का उल्लेख करना पर्याप्त होगा ।

(21) हमारी राय में, अनुच्छेद 14 का व्यापक दायरा निस्संदेह यूपी राज्य द्वारा अपनी कार्यकारी शक्ति के प्रयोग में जारी किए गए विवादित परिपत्र को अपने दायरे में लेता है, भले ही जिलों में सरकारी वकील की नियुक्ति की सटीक प्रकृति कुछ भी हो। अन्य अधिकार, संविदात्मक या वैधानिक, जो नियुक्त व्यक्तियों के पास हो सकते हैं। यही कारण है कि हम अपने निर्णय को इस आधार पर आधारित करते हैं कि नियुक्तियों के लिए उपलब्ध किसी भी वैधानिक अधिकार से स्वतंत्र और इस मामले के प्रयोजन के लिए यह मानते हुए कि अधिकार केवल नियुक्ति के अनुबंध से ही प्रवाहित होते हैं, जैसा कि लागू किया गया परिपत्र है। राज्य की कार्यकारी शक्ति को संविधान के अनुच्छेद 14 को पूरा करना चाहिए और यदि यह मनमाना दिखाया जाता है, तो इसे रद्द कर दिया जाना चाहिए। हालाँकि हमने प्रारंभिक नियुक्ति, समाप्ति या नवीनीकरण से संबंधित कुछ प्रावधानों का उल्लेख किया है

कार्यकाल यह इंगित करने के लिए कि कार्रवाई कम से कम तय दिशानिर्देशों द्वारा नियंत्रित है, जिसका पालन यूपी राज्य लंबे समय से कर रहा है। यह भी कथित मनमानी के प्रश्न पर निर्णय लेने के लिए प्रासंगिक है

(22) अब यह बहुत अच्छी तरह से तय हो गया है कि जीवित रहने के लिए राज्य की प्रत्येक कार्रवाई में मनमानी का दोष नहीं होना चाहिए, जो कि संविधान के अनुच्छेद 14 की जड़ है और कानून के शासन के लिए बुनियादी है, वह प्रणाली जो नियंत्रित करती है हम। मनमानी कानून के शासन का निषेध है। प्रत्येक राज्य कार्रवाई में इस बुनियादी परीक्षण की संतुष्टि इसकी वैधता के लिए *अनिवार्य है* और इस संबंध में, राज्य अनुबंध के क्षेत्र में भी किसी निजी व्यक्ति के साथ तुलना का दावा नहीं कर सकता है। अनुबंध के क्षेत्र में राज्य और एक निजी व्यक्ति के बीच इस अंतर को ध्यान में रखना होगा।

(जोर दिया गया)।

(23) *भारत के एलआईसी में, और। अन्य* बनाम *उपभोक्ता शिक्षा और अनुसंधान केंद्र और अन्य* (15), उनका आधिपत्य एक बार फिर दोहराया गया है इस सिद्धांत का पालन करें कि सार्वजनिक प्राधिकरण या सार्वजनिक हित में कार्य करने वाले व्यक्ति या उसके कार्यों से सार्वजनिक तत्व को जन्म मिलता है, की प्रत्येक कार्रवाई को सार्वजनिक हित द्वारा निर्देशित किया जाना चाहिए और यदि यह दिखाया गया है कि शक्ति का प्रयोग मनमाना, अन्यायपूर्ण और अनुचित है, तो उसे ऐसा करना चाहिए। राज्य, उसके तंत्र, सार्वजनिक प्राधिकरण या व्यक्ति के लिए कोई जवाब नहीं है जिनके कृत्यों में यह कहने के लिए सार्वजनिक तत्व का प्रतीक है कि उनके कार्य : निजी कानून के क्षेत्र में हैं। न्यायालय ने आगे कहा कि ऐसी सभी कार्रवाइयों को प्रासंगिक निर्देशों द्वारा निर्देशित किया जाना चाहिए
वह जनहित में.

(24) सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित सिद्धांतों के मद्देनजर हमारी राय है कि जहां समानता खंड के अनुसार सभी पात्र व्यक्तियों की उम्मीदवारी पर विचार करने के बाद *तदर्थ* या अस्थायी नियुक्ति की जाती है, सेवा की स्वत: समाप्ति की शर्त के साथ नियुक्ति को एक विशेष तिथि तक सीमित करने के मामले में नियोक्ता द्वारा, भले ही पद समाप्त नहीं किया गया हो और नियमित रूप से चयनित व्यक्ति उपलब्ध न हो, इसे पूरी तरह से मनमाना, तर्कहीन, अन्यायपूर्ण, दमनकारी और अचेतन माना जाएगा। और संविधान के अनुच्छेद 14 और 16o के विपरीत होने के कारण इसे रद्द किया जा सकता है। यह एक अलग स्थिति हो सकती है जहां किसी निर्दिष्ट कार्य के लिए नियुक्ति दी जाती है और पद केवल उसी कार्य के लिए बनाया जाता है और कार्य समाप्ति के कारण कर्मचारी की सेवा समाप्त कर दी जाती है।

(15) जेटी 1995 (4) एससी 366।

या जहां रोजगार अनुबंध में एक शर्त शामिल की गई है कि चयनित उम्मीदवार की उपलब्धता पर कर्मचारी की सेवा समाप्त कर दी जाएगी। हालाँकि, नियुक्ति को किसी विशेष तिथि तक सीमित करने का कोई औचित्य नहीं हो सकता है क्योंकि नियोक्ता रोजगार को *तदर्थ के रूप में वर्णित करना चुनता है।* हमारी राय में, नियोक्ता रोजगार के नियम और शर्तें निर्धारित करने के लिए अपने विशेषाधिकार का उपयोग यह शर्त शामिल करके नहीं कर सकता है कि कर्मचारी की सेवा एक विशेष तिथि पर समाप्त हो जाएगी, भले ही पद उपलब्ध रहे और नियोक्ता को आदमी की आवश्यकता हो उस पद के संबंध में कार्य करने की शक्ति. शिक्षकों के मामले में नियुक्ति आदेश/पत्र में ऐसी शर्त को अनुचित एवं जनहित के विपरीत नहीं कहा जा सकता। शिक्षकों की अनुपलब्धता के कारण समग्र रूप से छात्र समुदाय सबसे अधिक पीड़ित है और कार्यकारी अधिकारियों को शिक्षकों की नियुक्ति के क्रम में रोजगार की पूरी तरह से अनुचित शर्तों को शामिल करके मनमाने ढंग से कार्य करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

(25) हम अब इससे निपट सकते हैं श्री का तर्क रैना याचिकाकर्ता को आदेश (अनुलग्नक पीआई) में शामिल नियमों और शर्तों को चुनौती देने से रोका गया है क्योंकि उसने इन शर्तों को खुली आँखों से और बिना किसी विरोध के स्वीकार कर लिया है। निचोड़
का श्री रैना का तर्क है कि एनेक्सचर पीआई में शामिल नियमों और शर्तों के साथ नियुक्ति स्वीकार करने के बाद, याचिकाकर्ता को एनेक्सचर पीआई के एक हिस्से को चुनौती देने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। हमारी राय में श्री का यह तर्क रैना पूरी तरह गलत हैं। *वीणा* में भी इसी तरह के तर्क पर विचार किया गया है और उसे खारिज कर दिया गया है *रानी का मामला* (सुप्रा)। सरकारी वकील की दलील को खारिज करते हुए, जो एस्टोपल की दलील पर आधारित थी , डिवीजन ने
बेंच ने कहा: -

> "..... हम इस देश और दुनिया के अधिकांश हिस्सों में बढ़ती बेरोजगारी से पूरी तरह से अनजान नहीं रह सकते। तीसरी दुनिया के लगभग सभी देश युवा पीढ़ी की बढ़ती बेरोजगारी की समस्या से जूझ रहे हैं। यूनाइटेड किंगडम और संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे विकसित देशों में भी बेरोजगार युवाओं का प्रतिशत लगातार बढ़ रहा है। हमारा देश एक ऐसा देश है जहां विशाल बहुमत अमीरों की श्रेणी में आता है। सार्वजनिक सेवाओं में रोजगार कर्मचारियों को सुरक्षा की भावना देता है। आमतौर पर, सार्वजनिक रोजगार 'किराया और निकालो' के सिद्धांत का सहारा नहीं ले सकता, इसलिए, सार्वजनिक रोजगार स्वीकार किया जाता है

नियुक्ति के आदेशों में शामिल कठिन, मनमानी और अनुचित शर्तों के बावजूद । वास्तव में, रोजगार चाहने वाले व्यक्ति *के लिए* नियोक्ता हमेशा एक प्रभुत्वशाली स्थिति में होता है । *जो व्यक्ति अस्थायी या* तदर्थ *आधार पर और यहां तक कि नियमित आधार पर नियुक्त होने के लिए आवेदन करता है, वह रोजगार के नियमों और शर्तों के बारे में भावी नियोक्ता के साथ सौदेबाजी करने की स्थिति में नहीं है: वह कभी भी आदेश देने की स्थिति में नहीं हो सकता है। रोजगार अनुबंध या नियुक्ति आदेश में शामिल की जाने वाली शर्तें। नियोक्ता की इच्छा हमेशा प्रबल होती है।* इस स्थिति का लाभ उठाते हुए, संवैधानिक प्रावधानों द्वारा शासित सार्वजनिक नियोक्ता रोजगार के अनुबंध या नियुक्ति के आदेश में ऐसी शर्तों को शामिल नहीं कर सकता है। जो अचेतन, मनमाना या अनुचित हैं। ....."

(जोर दिया गया)।

(26) *प्रबंधक , सरकारी शाखा प्रेस और अन्य* बनाम *डी.बी. बेलियप्पा* में (16), सुप्रीम कोर्ट की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने किसी अस्थायी कर्मचारी की सेवा को बिना किसी कारण के समाप्त करने के नियोक्ता के अधिकार पर विचार किया। सर्वोच्च न्यायालय के उनके आधिपत्य ने स्पष्ट रूप से इस तर्क को खारिज कर दिया कि सेवा की समाप्ति रोजगार के नियमों और शर्तों के अनुसार की गई थी जैसा कि पैरा में की गई टिप्पणियों से प्रतीत होता है। फैसले के *24* . सुप्रीम कोर्ट ने नियोक्ता की ओर से पेश वकील *की इस दलील पर भी गौर किया* कि एक बार जब कर्मचारी स्वेच्छा से सेवा अनुबंध में शामिल हो जाता है, तो वह नियोक्ता की कार्रवाई के खिलाफ शिकायत नहीं कर सकता है। इस दलील को सुप्रीम कोर्ट भी खारिज कर चुका है. इस मुद्दे पर सर्वोच्च न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियाँ काफी शिक्षाप्रद हैं और इसलिए, हम उन्हें यहाँ उद्धृत कर रहे हैं: -

"25. श्री वीरप्पा के तर्क का एक और पहलू यह है कि प्रतिवादी ने स्वेच्छा से उसे दी गई रोजगार की शर्तों पर सेवा का अनुबंध किया था । उस अनुबंध की शर्तों में से एक, जो उनके नियुक्ति पत्र में सन्निहित है, यह है कि उनकी सेवा पूरी तरह से अस्थायी थी और नियुक्ति प्राधिकारी की इच्छा और इच्छा पर, बिना कारण और बिना सूचना के समाप्त की जा सकती थी। *उसे दी गई शर्तों पर स्वेच्छा से रोजगार स्वीकार कर लिया। प्रतिवादी शिकायत नहीं कर सकता*

(16) एआईआईटी , 1979 एस ,सी । 429.

ऊ

उन पारस्परिक रूप से सहमत शर्तों के अनुसार की गई आक्षेपित कार्रवाई के विरुद्ध। यह तर्क पूरी तरह गलत है। यह पुरातन सामान्य कानून अवधारणा से उधार लिया गया है कि रोजगार केवल मालिक और नौकर के बीच का मामला था। प्रथमतः, यह नियम अपने मूल निरपेक्ष रूप में सरकारी सेवकों पर लागू नहीं होता है। दूसरे, निजी रोज़गार के संबंध में भी, इसका अधिकांश भाग समय के जीवाश्म में समा चुका है। "यह नियम उस समय प्रचलित था जब मालिक और नौकर को अब की तुलना में अधिक शाब्दिक रूप से लिया जाता था और जब प्रारंभिक रोमन कानून में, नौकर के अधिकार, घर के किसी भी अन्य सदस्य के अधिकारों की तरह थे, उसका नहीं बल्कि उसके पैतृक परिवारों का।" इस प्राचीन सिद्धांत के निहितार्थ 18 वीं सदी के एंग्रो -अमेरिकन न्यायशास्त्र और 20 वीं सदी के पूर्वार्ध में देखे जा सकते हैं, जिसने कर्मचारी को बर्खास्त करने के नियोक्ता के पूर्ण अधिकार को तर्कसंगत बनाया। *"ऐसा दर्शन", जैसा कि केके मैथ्यू, जे. द्वारा बताया गया है* - (*अपने ग्रंथ: "लोकतंत्र, समानता और स्वतंत्रता", पृष्ठ* 526 के अनुसार) *"अपने कर्मचारी पर नियोक्ता का प्रभुत्व* देहाती सादगी के अनुरूप हो सकता है बीते दिन. *लेकिन वह दर्शन बड़े, अवैयक्तिक, कॉर्पोरेट नियोक्ताओं के इन दिनों के साथ असंगत है।* बड़े पैमाने पर बदली हुई और बदलती सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों और आजकल के रीति-रिवाजों के अनुरूप इसे लाने के लिए, इस पुराने, पुरातन और अन्यायपूर्ण सिद्धांत का अधिकांश हिस्सा न्यायिक निर्णयों और कानून द्वारा नष्ट कर दिया गया है, विशेष रूप से सार्वजनिक रोजगार में व्यक्तियों के लिए इसके आवेदन में, जिनके लिए अनुच्छेद 14, 15. 16 एवं 311 का संवैधानिक संरक्षण उपलब्ध है। इसलिए इस तर्क को खारिज कर दिया गया है।"

(अंडरलाइनिंग हमारी है)

(27) रोजगार की संविदात्मक प्रकृति के बारे में एक समान तर्क *सेंट्रल इनलैंड वाटर ट्रांसपोर्ट कॉर्पोरेशन लिमिटेड* बनाम *ब्रोजो* मामले में विचार **किया गया और खारिज कर दिया गया** *नाथ गांगुली* (17), *डीटीसी* बनाम। *डीटीसी मजदूर कांग्रेस* (18), *और एलआईसी ऑफ इंडिया और अन्य* बनाम *उपभोक्ता शिक्षा और अनुसंधान केंद्र और अन्य* (सुप्रा)। इन तीन मामलों में से पहले दो में सुप्रीम कोर्ट के आधिपत्य ने नियमों में निहित एक खंड से निपटा, जो नियोक्ता को तीन बार देकर एक स्थायी कर्मचारी की सेवा समाप्त करने के लिए अधिकृत करता है।

(17) एटीआर: 1986 एससी 1571।

(18) एआईआर 1990 (1) पूरक। एससीसी 600.

महीनों का नोटिस. केंद्रीय अंतर्देशीय जल परिवहन निगम के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने अपने आधिपत्य में कहा:-

"क्या तब हमारी अदालतों को समय के साथ आगे नहीं बढ़ना चाहिए? क्या उन्हें अभी भी पुरानी अवधारणाओं और घिसी-पिटी विचारधाराओं से चिपके रहना चाहिए? क्या हमें आज के फैशन से मेल खाने के लिए अपनी सोच को समायोजित नहीं करना चाहिए ? क्या सभी न्यायिक विकास हमें यूं ही छोड़ देना चाहिए, जिससे हम लड़खड़ा जाएं उन्नीसवीं सदी के थ्योरी के दलदल में ? क्या ताकतवर को कमजोरों को दीवार पर धकेलने की अनुमति दी जानी चाहिए? क्या उन्हें कमजोरों पर अत्याचार करने की अनुमति दी जानी चाहिए? हमारे देश के लिए हमारे न्यायाधीश अपनी शपथ से बंधे हैं " संविधान और कानूनों को कायम रखें" संविधान इस देश के सभी नागरिकों को सामाजिक और आर्थिक न्याय दिलाने के लिए बनाया गया था , संविधान का अनुच्छेद 14 सभी व्यक्तियों को कानून के समक्ष समानता और कानूनों की समान सुरक्षा की गारंटी देता है मामले के इस भाग पर उपरोक्त चर्चा अधिकार और तर्क के अनुरूप है , जिसका उद्देश्य सामाजिक और आर्थिक न्याय सुरक्षित करना है और अनुच्छेद 14 में महान समानता खंड के आदेश के अनुरूप है। यह सिद्धांत है कि अदालतें लागू नहीं करेंगी और करेंगी, जब ऐसा करने के लिए कहा जाता है, तो हड़ताल और अनुचित और अनुचित अनुबंध या सौदेबाज़ी करने वाले पक्षों के बीच अनुबंध में एक अनुचित और अनुचित खंड । इस प्रकार के सभी सौदों की एक विस्तृत सूची तैयार करना कठिन है । कोई भी अदालत पुरुषों के मामलों में उत्पन्न होने वाली विभिन्न स्थितियों की कल्पना नहीं कर सकती । केवल कुछ उदाहरण देने का प्रयास किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, उपरोक्त सिद्धांत वहां लागू होगा जहां सौदेबाजी की शक्ति की असमानता अनुबंध करने वाले दलों की आर्थिक ताकत में बड़ी असमानता का परिणाम है । यह वहां लागू होगा जहां असमानता परिस्थितियों का परिणाम है, चाहे पार्टियों का निर्माण हुआ हो या नहीं। यह उन स्थितियों पर लागू होगा जिनमें स्पीकर पार्टी ऐसी स्थिति में है जिसमें वह केवल मजबूत पार्टी द्वारा लगाई गई शर्तों पर सामान या सेवाएं या आजीविका के साधन प्राप्त कर सकता है या उनके बिना रह सकता है। यह वहां भी लागू होगा जहां किसी व्यक्ति के पास अनुबंध पर अपनी सहमति देने या निर्धारित या मानक रूप में बिंदीदार रेखा पर हस्ताक्षर करने या अनुबंध के हिस्से के रूप में नियमों के एक सेट को स्वीकार करने के अलावा कोई विकल्प या सार्थक विकल्प नहीं है, हालांकि अनुचित, अनुचित

और उस अनुबंध या प्रपत्र या नियमों में एक खंड अचेतन हो सकता है। हालाँकि, यह सिद्धांत वहाँ लागू नहीं होगा जहाँ सौदेबाजी की शक्ति या अनुबंध करने वाली पार्टियाँ समान या लगभग बराबर हैं। यह सिद्धांत वहां लागू नहीं हो सकता जहां दोनों पक्ष व्यवसायी हैं और अनुबंध एक वाणिज्यिक लेनदेन है। अपने विशाल ढांचागत संगठनों के साथ विशाल निगमों की आज की जटिल दुनिया में और राज्य अपने उपकरणों और एजेंसियों के माध्यम से उद्योग और वाणिज्य की लगभग हर शाखा में प्रवेश कर रहा है, ऐसी असंख्य स्थितियां हो सकती हैं जिसके परिणामस्वरूप पूरी तरह से अनुपातहीन और असमान संपत्ति रखने वाले दलों के बीच अनुचित और अनुचित सौदेबाजी हो सकती है। सौदेबाजी की शक्ति।

इन मामलों को न तो गिनाया जा सकता है और न ही पूरी तरह से चित्रित किया जा सकता है । . न्यायालय को प्रत्येक मामले का निर्णय अपने तथ्यों के आधार पर करना चाहिए
परिस्थितियाँ ।"

(28) दूसरे मामले में उनके आधिपत्य ने माना कि अनुबंध की स्वतंत्रता अनुबंध करने वाले पक्षों के बीच सौदेबाजी की शक्ति की समानता पर आधारित होनी चाहिए। उन्होंने आगे कहा कि ऐसी असंख्य स्थितियाँ हो सकती हैं जिसके परिणामस्वरूप पूरी तरह से अनुपातहीन और असमान सौदेबाजी की शक्ति रखने वाले दलों के बीच अनुचित और अनुचित सौदेबाजी हो सकती है। अंतिम उल्लेखित मामले में जीवन बीमा निगम का एक नीतिगत निर्णय जो एक विशेष बीमा पॉलिसी को सीमित करता है सरकारी, अर्ध-सरकारी या प्रतिष्ठित वाणिज्यिक फर्मों से वेतनभोगी वर्ग को असंवैधानिक माना गया।

(29) उच्चतम न्यायालय द्वारा उपरोक्त कानून प्रतिपादन और वीणा में की गई टिप्पणियों के आलोक में रानी का मामला (सुप्रा) हम श्री के तर्क को स्वीकार करने का कोई कारण नहीं मिला रैना वो पेटी व्यक्ति को अनुबंध पीआई में शामिल नियमों और शर्तों पर सवाल उठाने से रोका जाना चाहिए । पेटी की स्थिति में रखा गया अतः , कोई भी समझदार व्यक्ति नियुक्ति की मनमानी और दमनकारी शर्तों का विरोध नहीं कर सकता था। यदि अपनी योग्यता और रोजगार कार्यालय में वरिष्ठता के बावजूद, याचिकाकर्ता ने अपनी नियुक्ति को 30 जून, 1995 तक सीमित करने वाली शर्त के खिलाफ विरोध करने की हिम्मत की होती, तो उसने ऐसा अपने जोखिम के साथ किया होता। हमारे विचार में, वह भाषा शिक्षक का पद उपलब्ध होने के बावजूद और अधीनस्थ सेवाओं द्वारा चयनित हाथों की कोई संभावना नहीं होने के बावजूद उसे सीमित नियुक्ति देने के उत्तरदाताओं के अधिकार को चुनौती देने की स्थिति में नहीं थी। चयन बोर्ड। इस प्रकार, अनुलग्नक पीआई में शामिल शर्तों पर आपत्ति करने में उसकी विफलता को उसे राहत देने से इनकार करने का आधार नहीं बनाया जा सकता है।

. *के. वर्मा* में इस न्यायालय के निर्णय बनाम *पंजाब राज्य* (सुप्रा), *धर्मबीर सिंह* बनाम *हरियाणा राज्य* (सुप्रा), और *संत राम भाल* वी. *हरियाणा के स्लेट (सुप्रा) पर डॉ. सूबेदार सिंह आर्य के मामले* (सुप्रा) में डिवीजन बेंच द्वारा विचार और अंतर किया गया है। हम एक बार फिर देख सकते हैं कि एस.के. वर्मा के मामले (सुप्रा) में *न्यायालय द्वारा तय* किया गया मुख्य बिंदु *तदर्थ* नियुक्ति की प्रकृति से संबंधित था। *ओम प्रकाश शर्मा* बनाम *हरियाणा राज्य (19)* में , इस न्यायालय की एक खंडपीठ ने सर्वोच्च न्यायालय के विभिन्न निर्णयों पर ध्यान दिया, जिनमें से कुछ को इस आदेश में भी संदर्भित किया गया है और यह माना गया कि एक *विज्ञापन की सेवा* रोजगार अनुबंध के अनुसार *अस्थायी नियुक्ति को समाप्त किया जा सकता है। इसी तरह संत राम भाल के मामले में* (सुप्रा) मुख्य प्रश्न जो पूर्ण पीठ के समक्ष रखे गए थे, वे एक *तदर्थ* नियुक्त व्यक्ति के उस पद पर बने रहने के अधिकार से संबंधित थे जिस पर वह था। पदोन्नत किया गया. यह माना गया कि एक *तदर्थ* पदोन्नत व्यक्ति को पद पर बने रहने का अधिकार नहीं है और उसे कारण बताओ नोटिस दिए बिना पद से हटाया जा सकता है और वह सेवा के ऐसे प्रत्यावर्तन/समाप्ति को चुनौती नहीं दे सकता है। हालाँकि, उपर्युक्त किसी भी मामले में शर्त की वैधता नहीं है रोज़गार के अनुबंध में शामिल मुद्दों को उठाया गया और इस न्यायालय द्वारा निर्णय सुनाया गया। इसलिए। एस . *के. वर्मा के मामले* में निर्णय (सुप्रा)। *धर्मबीर सिंह का मामला* (सुप्रा) और *संत राम रहल का मामला (सुप्रा) जिस पर डॉ. सूबेदार सिंह आर्य के मामले* (सुप्रा) और *वीना* में दो डिवीजन बेंचों द्वारा विधिवत विचार किया गया है। *रानी के मामले* (सुप्रा) को याचिकाकर्ता को राहत देने से इनकार करने का आधार नहीं बनाया जा सकता। दो डिवीजन बेंच के फैसलों में यह निर्धारित किया गया है कि सेवा की मनमानी और दमनकारी शर्तों को शामिल करना संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 का उल्लंघन है और इसलिए, वर्तमान मामला, जिसमें इसी तरह की चुनौती दी गई है। याचिकाकर्ता, उन दो निर्णयों के आलोक में निर्णय लेने का पात्र है।

भारतेंदु शर्मा बनाम *हरुआवा राज्य)* में डिवीजन बेंच का निर्णय, जिस पर श्री द्वारा भरोसा रखा गया है । रैना के मामले में दिए गए फैसले से प्रतिवादियों को कोई मदद नहीं मिली। उस फैसले को ध्यान से पढ़ने पर पता चलता है कि *भारतेंदु शर्मा के मामले* **(सुप्रा)** पर फैसला सुनाने वाली खंडपीठ को नियुक्ति पत्र में शामिल सेवा की शर्तों की संवैधानिकता पर फैसला सुनाने के लिए नहीं बुलाया गया था । 'वह फैसला एक *तदर्थ* नियुक्त व्यक्ति द्वारा कार्यकाल की समाप्ति के बाद सेवा में बने रहने के दावे पर विचार करने तक सीमित है।

(19) 1961 (1) एसएलआर 314.

का । इस न्यायालय की पूर्ण पीठ के निर्णयों और *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *कौशल* मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों पर भरोसा करते हुए *किशोर शुक्ल* (20) डिवीजन बेंच ने याचिकाकर्ता के दावे को खारिज कर दिया। इसमें कोई संदेह नहीं है, उस फैसले में डॉ. *सूबेदार सिंह के मामले* (सुप्रा) के फैसले और 1994 के सीडब्ल्यूपी नंबर 8977 *(सुनील कुमार और अन्य* बनाम *हरियाणा राज्य और अन्य) के एक अन्य फैसले का संदर्भ दिया गया है,* लेकिन ऐसा नहीं है *वीणा* में दूसरे फैसले का संदर्भ *रानी का मामला* (सुप्रा)। *सुनील कुमार के मामले (सुप्रा)* में 20 जुलाई, 1994 को दिए गए फैसले में डॉ. *सूबेदार सिंह के मामले* (सुप्रा) और *वीणा के* फैसले का संदर्भ दिया गया है। *रानी के मामले* (सुप्रा) में, लेकिन *भारतेंदु शर्मा के मामले (सुप्रा)* में बाद के फैसले में *वीणा* में विस्तृत फैसले पर अदालत का ध्यान आकर्षित नहीं किया गया। *रानी का मामला* (सुप्रा)। इस प्रकार *भारतेंदु शर्मा के मामले (सुप्रा)* में फैसले को कानून के एक प्रस्ताव के रूप में नहीं पढ़ा जा सकता है कि नियोक्ता को मनमाने ढंग से और असंवैधानिक तरीके से शामिल करने का पूर्ण अधिकार है। सेवा की शैक्षणिक शर्तें, और वह। निर्णय स्पष्ट है . जिले स्पर्श करने योग्य । इसके अलावा, *भारतेंदु शर्मा के मामले में भी* डिवीजन बेंच ने इस सिद्धांत का पालन किया है कि सरकार एक *तदर्थ* कर्मचारी को दूसरे *तदर्थ* कर्मचारी से नहीं बदल सकती है और ठीक इसी कारण से न्यायालय ने निर्देश दिया कि .. यदि प्रश्न में पद पर नियुक्ति की जानी है *तदर्थ आधार* पर जारी रखा जाता है , तो याचिकाकर्ता को किसी अन्य उम्मीदवार के बजाय *तदर्थ* कर्मचारी के रूप में उस पद पर तब तक नियुक्त किया जाएगा जब तक कि विधिवत चयनित उम्मीदवार उपलब्ध नहीं हो जाता।

उत्तर प्रदेश राज्य *बनाम* कौशल *में* सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय *किशोर श्वक्ला* (सुप्रा) का इस मामले में शामिल विवाद से कोई लेना-देना नहीं है। उस निर्णय में सर्वोच्च न्यायालय के माननीय न्यायाधीश एक ऐसे मामले से चिंतित थे, जिसमें नौकर *' एनएफ* प्रतिवादी, जो एक *तदर्थ* नियुक्त व्यक्ति था, को असंतोषजनक कार्य और आचरण के कारण तथा इस आधार पर बर्खास्त कर दिया गया कि वह सेवा के लिए अनुपयुक्त था। इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने इस आधार पर बर्खास्तगी में हस्तक्षेप किया था कि कनिष्ठों को सेवा में रखा गया था। उनके आधिपत्य ने माना कि 'अंतिम आओ पहले जाओ' का नियम उस मामले में लागू नहीं होता है जहां किसी अस्थायी कर्मचारी की सेवा उसकी सेवा की शर्तों के अनुसार उसके कार्य और उपयुक्तता के आकलन पर समाप्त की जाती है। सर्वोच्च न्यायालय ने आगे कहा कि किसी वरिष्ठ को सेवा से हटाया जा सकता है - यदि वह अनुपयुक्त पाया जाता है और उसमें मामला

(20) 1991 (1) एसएलआर 606।

बनाए रखने से वरिष्ठ को अनुच्छेद 14 और 16 के उल्लंघन की शिकायत करने का कोई अधिकार नहीं मिल जाता है। सर्वोच्च न्यायालय ने इस आशय की कुछ टिप्पणियाँ की हैं कि एक अस्थायी सरकारी कर्मचारी को पद पर बने रहने का कोई अधिकार नहीं है, लेकिन ये हैं संविधान के अनुच्छेद 311 के संदर्भ में की गई टिप्पणियाँ।'
इसलिए, वह निर्णय उत्तरदाताओं के लिए कोई सहायता नहीं हो सकता है।

सरकार के विभिन्न विभागों *द्वारा* नियमित नियुक्तियों के लिए प्रयास करने में विफलता के कारण , तदर्थ नियुक्तियाँ की जाती हैं जो वर्षों तक जारी रहती हैं और फिर की नीतियां. हरियाणा लोक सेवा आयोग और अधीनस्थ सेवा चयन बोर्ड जैसी एजेंसियों को वस्तुतः दरकिनार करते हुए नियमितीकरण जारी किए जाते हैं। इस न्यायालय के समक्ष *तदर्थ* नियुक्तियों से संबंधित विवादों से जुड़े कई मामले आए हैं । यदि सरकार हरियाणा लोक सेवा आयोग और अधीनस्थ सेवा चयन बोर्ड को मांग भेजती है, तो इस प्रकार की मुकदमेबाजी से बचा जा सकता है, जो संवैधानिक/वैधानिक निकाय हैं जिन्हें चयन के लिए सिफारिशें करने का काम सौंपा गया है। वर्तमान मामले की तरह, हरियाणा सरकार के अधिकांश अन्य विभागों में नियमित चयन नहीं किया गया है, जिसके कारण तदर्थ नियुक्तियों की आवश्यकता है। जो लोग पात्र हो जाते हैं वे चयन और नियमित नियुक्ति के लिए विचार किए जाने के लिए बिना किसी बदलाव के इंतजार करना जारी रखते हैं, कभी-कभी ऐसे व्यक्ति नियमित चयन की प्रक्रिया शुरू होने तक अधिक उम्र के हो जाते हैं। इसलिए, हरियाणा सरकार को रिक्त पड़े पदों की मांग हरियाणा लोक सेवा आयोग और अधीनस्थ सेवा चयन बोर्ड को भेजने का निर्देश देना आवश्यक है, ताकि ये एजेंसियां नियमित चयन के लिए कदम उठा सकें ।

(34). परिणामस्वरूप, हम इस रिट याचिका को स्वीकार करते हैं और घोषणा करते हैं कि अनुलग्नक पीआई में निहित शर्त, याचिकाकर्ता की नियुक्ति को 30 जून, 1995 तक इस शर्त के साथ सीमित करती है कि उसकी सेवा उस दिन समाप्त हो जाएगी और उसे कार्यमुक्त कर दिया जाएगा। 30 जून, 1995 को दिया गया निर्णय मनमाना, दमनकारी, अचेतन और असंवैधानिक है। एक तार्किक परिणाम के रूप में, 'याचिकाकर्ता की सेवा की समाप्ति, - विस्तृत अनुबंध पी 3 को भी अवैध घोषित किया जाता है और इस निर्देश के साथ रद्द कर दिया जाता है कि याचिकाकर्ता को सभी परिणामी लाभों के साथ सेवा में वापस लिया जाएगा। हालाँकि, हम यह स्पष्ट करते हैं कि नियमित रूप से चयनित उम्मीदवारों की उपलब्धता के बाद उसे सेवा में बने रहने का कोई अधिकार नहीं होगा और नियोक्ता को उसकी सेवा समाप्त करने का भी अधिकार होगा ।

असंतोषजनक कार्य, भले ही नियमित रूप से चयनित उम्मीदवार उपलब्ध न हो। हम आगे
हरियाणा सरकार को निर्देश देते हैं
नियमित चयन करने के उद्देश्य से रिक्त पदों के संबंध में हरियाणा लोक सेवा आयोग और अधीनस्थ सेवा चयन बोर्ड को मांग भेजने के लिए तत्काल कदम उठाने के लिए , -

(35) पार्टियों को अपनी लागत स्वयं वहन करने के लिए छोड़ दिया गया है।

जेएसटी

अस्वीकरण: स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय, वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके, और किसी अन्य उद्देश्य के लिया इसका उपयोग नहीं किया जा सकेगा। सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा।

जिज्ञासा शर्मा

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी

13442 एम€-- सरकार । प्रेस , । यूडब्ल्यू. , टी ।। च्ड ,